naya shikshak

(Teacher Today)

Vol. 57 | No. 1 | Jan.-March. 2015 | Price ₹ 20.00

A Bilingual National & International Quarterly Journal of Education

Directorate of Secondary Education, Rajasthan, BIKANER - 334011 (INDIA)

SUBSCRIPTION

INLAND

Single Copy	
* Rs. 20.00	* Rs. 10.00 (For Teacher)
Annual	
* Rs. 80.00	* Rs. 40.00 (For Teacher)

FOREIGN

Single Copy	Annual
* £ 1 or $ 2	* £ 3 or $ 6

INTIMATION

* Bank Draft, Indian postal order & M.O. should be payable to The Director, Secondary Education, Rajasthan, Bikaner.
* Remuneration is payable on the published articles.
* Ideas expressed in Teacher Today do not necessarily represent the opinion of the Rajasthan Education Department.
* Send Your bio-data with bust size photo alongwith the article.
* Please send an abstract of article in either language also.

Address for Sending Articles

The Senior Editor
Teacher Today
Deptt. of Secondary Education, Rajasthan
Bikaner-334011

Bank Draft/M.O. Payable to

The Director
Secondary Education, Rajasthan
Bikaner-334011, India
Phone : 0151-2528875 Fax : 0151-2201861
E-mail : teacher.today@yahoo.com

PRINTER

Harihar Printers
J-97, Ashok Chowk, Adarsh Nagar, Jaipur
Telefax : 0141-2600850

सांस्कृतिक विकास एवं अध्यापक शिक्षा

• डॉ. गिरिराज भोजक

मानव एक सामाजिक एवं विकासशील प्राणी है। वर्तमान आधुनिक मानवीय सभ्यता के विकास की शृंखला के प्रमुख तथा केन्द्रीय आयाम है– संस्कार, साहित्य एवं शिक्षा। प्राचीन युग से ही मानव अपने पूर्वजों द्वारा स्थापित संस्कार, जीवन पद्धति एवं सामाजिक मानदण्डों का अनुसरण करते हुए अपने संपूर्ण आचार, व्यवहार एवं सामाजिक कार्यशैली के परिमार्जन हेतु प्रयासरत रहा है। आधुनिक सभ्यता एवं संस्कृति के विकास में शिक्षा ने प्रमुख भूमिका निभाते हुए सांस्कृतिक हस्तांतरण द्वारा ज्ञान–विज्ञान को जन–जन तक प्रसारित किया है।

संस्कृति : अवधारणा

संस्कृत भाषा के 'सम्' उपसर्ग के साथ 'कृ' धातु में 'क्तिन' प्रत्यय के योग से निर्मित शब्द 'संस्कृति' मूलतः एक आत्मगत तत्व है। इसका शाब्दिक अर्थ है–परिष्कार, पवित्रीकरण अथवा सभ्यता का वह स्वरूप जो आध्यात्मिक व मानसिक विशिष्टता का द्योतक होता है। डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार ''मनुष्य अपनी बुद्धि का प्रयोग कर विचार एवं कर्म के क्षेत्र में जो भी सर्जन करता है, उसको संस्कृति कहते हैं।'' संस्कृति अपने आप में एक मूल्य है, एक प्राप्तव्य है, इसके मूल में आत्मनियंत्रण व संयम के भाव निहित हैं। संस्कृति एवं सभ्यता में 'आत्मा एवं शरीर' रूपी

घनिष्ठ संबंध है। संस्कृति एक अखण्ड सत्ता है जिसके द्वारा मनुष्य अपने अतीत के गौरव को जागरुक रखकर अपने कार्य-व्यापार का नियंत्रण करने में तथा अपने समकालीन मनुष्यों के व्यक्तित्व की गरिमा एवं उनके दृष्टिकोणों को उदाहरण से हृदयंगम करने में समर्थ होता है।

भारतीय संस्कृतिः स्वर्णिम पक्ष

प्राचीन भारतीय संस्कृति की विराटता, विलक्षणता एवं उदात्तता इस साक्ष्य से ही परिलक्षित होती है कि युगों युगों से विभिन्न देशों के विचारक, शोधार्थी एवं ज्ञान पिपासु अपनी समस्त जिज्ञासाओं के समाधान हेतु इसका अवगाहन करते आये हैं। भारतीय संस्कृति 'वसुधैव कुटुम्बकम्' 'आत्मव् सर्वभूतेषु' जैसे आदर्श सूत्रों द्वारा संपूर्ण विश्व को समन्वयवादी दृष्टिकोण आत्मसात करते हुए शांतिपूर्ण सहअस्तित्व का संदेश देती आई है। जन्म से मृत्युपर्यन्त सोलह संस्कार, चतुर्वणी व्यवस्था, धार्मिक सहिष्णुता, पुरुषार्थ चतुष्ट्य, आध्यात्मिक व दार्शनिक चिंतन आदि भारतीय संस्कृति के ऐसे आयाम है जो संपूर्ण वैयक्तिक एवं सामाजिक विषमताओं, समस्याओं एवं असंतुलन के समाधान हेतु समस्त विश्व का मार्गदर्शन करने में सक्षम हैं। भारतीय ऋषि परंपरा द्वारा इस विशाल संस्कृति विविध आयामों का हस्तांतरण 'गुरुकुल शिक्षा पद्धति', संस्कृत भाषा के महान ग्रंथों द्वारा पीढ़ी पर पीढ़ी अनवरत चलता रहा जिनमें प्रमुख है- वेद, उपनिषद, पुराण एवं स्मृतियां, श्रीमद्भगवद् गीता आदि। इसके अलावा विविध धर्मों के धार्मिक ग्रंथ, आयुर्वेद, ज्योतिषशास्त्र, अर्थशास्त्र, ललित कलाओं संबंधी अन्यान्य ग्रंथ भारतीय संस्कृति की अविरल धारा का स्वर्णिम संग्रह प्रस्तुत करते हैं भारतीय संस्कृति अपने मूल रूप में आदर्श केन्द्रित है जिसमें मानव जीवन का चरम लक्ष्य 'आत्मतत्व' की प्राप्ति हेतु 'साधन' की अपेक्षा 'साधना' को विशेष वरीयता प्रदान की गई है।

सांस्कृतिक विकास एवं समसामयिक समस्याएँ

मानव सभ्यता के विकास क्रम में भारत की ऋषि परंपरा का सर्वप्रमुख उद्देश्य रहा कि संपूर्ण विश्व कल्याणार्थ हेतु सुसंस्कृत, परिष्कृत एवं जनकल्याणकारी नागरिकों के निर्माण हेतु निरंतर प्रयास किये जायें। प्राचीन गुरुकुल पद्धति में एक शिष्य की समस्त जीवन शैली से जुड़े संस्कारों का स्वानुभव द्वारा रोपण करते हुए उसके नैतिक, चारित्रिक, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास के सघन प्रयास किये जाते थे। किसी भी देश की शिक्षा व्यवस्था काल सापेक्ष होती है। जहाँ एक ओर प्राचीन शिक्षा अध्यात्म, मूल्य एवं चरित्र प्रधान रही, कालांतर में मुख्यतः अरब, मुगल, फ्रांसीसी एवं अंग्रेजों के आगमन के साथ ही भारतीय संस्कृति के मूल स्वरूप में अनेक परिवर्तन घटित हुए।

ऐतिहासिक कालक्रम में भारतीय समाज विदेशी सभ्यता, संस्कृति एवं मूल्यों से पूर्णतः अछूता न रह सका जिसके परिणामस्वरूप 'आध्यात्मकेन्द्रित संस्कृति' का स्वरूप 'भौतिक समृद्धि' की ओर उन्मुख होने लगा। ब्रिटिश शासनकाल में बम्बई, बंगाल, मद्रास प्रांत में किये गये सर्वेक्षणों द्वारा सन् 1835 में प्रकाशित रिपोर्ट भारतीय शिक्षा की समृद्धशाली परंपरा का साक्ष्य प्रस्तुत करती है। लार्ड मैकाले प्रवर्तित नवीन शिक्षा प्रणाली के माध्यम से भारत की आत्मा अर्थात् संस्कृति को तोड़ मरोड़ कर भारतीय समाज में पश्चिमी विचारों, मूल्यों व मान्यताओं को जबरन प्रविष्ट कराने का प्रयास किया गया। ज्ञान-विज्ञान, मशीनीकरण, आधुनिकता के मायाजाल में संपूर्ण संस्कृति के मूल तत्वों को भुलाकर अर्थोपार्जन व उपभोक्तावादी संस्कृति की स्थापना में संलग्न हो गया।

समकालीन भारतीय समाज तीव्र संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। एक ओर पश्चिमीकरण , आधुनिकीकरण, वैश्वीकरण की तीव्र धारा है तो दूसरी ओर सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण का प्रश्न खड़ा है। इस परिवर्तनकारी प्रक्रिया की प्रेरणा में अनेक कारक उत्तरदायी है- नवीन आवश्यकताएं, सुविधासम्पन्न जीवनशैली की उपलब्धता, तकनीकी विकास का अनुराग, नवीन मूल्यों से सामंजस्य आदि। आज देश में अनेक विघटनकारी शक्तियां हमारी विलक्षण संस्कृति पर प्रहार करते हुए एक 'अपसंस्कृति' को जन्म देने में संलग्न हैं जिससे हमारे लिए सांस्कृतिक संकट की प्रतिच्छाया में अनेक समस्याएं उठ खड़ी हुई हैं जिनमें प्रमुख हैः

1. छद्म आधुनिकीकरण
2. धर्म एवं अध्यात्म विमुखता
4. धर्म का राजनीतिकरण
3. विवेकहीन धर्मान्धता
5. भोगवादी समाज का उदय
6. मानवीय मूल्यों का अवमूल्यन
7. तकनीकी विकास का दुष्प्रयोग

भारतीय संस्कृति एवं समाज एक ही काल में दो विपरीत ध्रुवों के आकर्षण के बीच अनिर्णय की स्थिति में फंसा है। एक ओर पश्चिमी जीवन शैली का सम्मोहन है दूसरी ओर अपनी सांस्कृतिक अस्मिता के आग्रह है। अनिश्चय एवं अनिर्णय की स्थिति में एक 'त्रिशुंक संस्कृति' का उदय हो रहा है। जो अवसरवादी, आधारहीन एवं पीड़ादायक है। भोगवादी प्रवृत्ति हमारे सामाजिक ढांचे को छिन्न भिन्न कर महिला उत्पीड़न, यौन शोषण, समलिंगी विवाह, एकल परिवार, माँसाहार, अव्यवस्थित जीवनशैली आदि समस्याओं के उद्भव का मूल कारण है।

सांस्कृतिक विकास : अध्यापक शिक्षा की भूमिका

एक कुशल नागरिक का निर्माण संपूर्ण शिक्षा पद्धति का सर्वप्रमुख लक्ष्य है, जिसका मूल आधार है अध्यापक शिक्षा। संपूर्ण शिक्षक-प्रशिक्षक समुदाय के सामने यह ज्वलंत प्रश्न है कि भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्यों की पुनर्स्थापना अथवा निरंतरता के साधनों का विकास कैसे किया जाये? चूंकि पाठ्यचर्या का स्वरूप इसका केन्द्रीय आयाम है लेकिन केवल उद्देश्य अनुरूप पाठ्यचर्या निर्माण हमारे लक्ष्य का अधूरा आयाम है। अमूर्त पाठ्यचर्या निर्माण से अधिक महत्वपूर्ण है मूर्त साधनों का परिष्कार जिसमें प्राध्यापक, शिक्षण विधियाँ पाठ्यसहगामी क्रियाएं एवं महाविद्यालय प्रबंधन आदि सम्मिलित है। सांस्कृतिक मूल्यों की प्रतिस्थापना हेतु निम्नलिखित सुझाव उल्लेखित हैं-

1. संस्कृति की वैज्ञानिकता का उद्घाटनः वर्तमान आधुनिक परिवेश में जहाँ सभी प्रशिक्षणार्थी हमारी सांस्कृतिक जीवन शैली, पर्व, त्यौहार, आहार-विहार को मात्र एक परंपरा के रूप में धारण करते हैं उन्हें सभी सांस्कृतिक आयामों से जुड़ी तथ्यपरक, विश्वसनीय एवं वैज्ञानिक सूचनाएँ, प्राध्यापकों द्वारा समय-समय पर प्रदान की जाये। इसके परिणामस्वरूप वे सभी मान्यताओं, संस्कारों एवं मूल्यों को सत्यान्वेषण द्वारा आत्मसात् कर सकें।

2. वैश्विक परिदृश्य में उपादेयताः भारत देश में 'अमेरिका रिटर्न' उत्पादों , चाहे भौतिक या मानवीय हों, को अधिक सम्मानजनक पद प्रदान किया जाता है। इसी तर्ज पर विश्व के सभी देशों में भारतीय संस्कृति के अनुकरण करने वाले आदर्शों (Models) की चर्चा परिचर्चा, वाद-विवाद, आत्मलेखन (Autobiography) ई-लर्निंग द्वारा व्यक्तिशः अंतः क्रिया हेतु संपर्क कक्षाओं, उत्पाद निर्माण आदि की जानकारी संबंधी कार्यक्रमों का आयोजन हो। जिससे प्रशिक्षणार्थी भावी शिक्षक जीवन में इन्हें विद्यार्थियों को संप्रेषित कर सकें।

3. संबंधित 'आदर्शों' से सीधा संपर्क- भारतीय जीवन की पुनर्स्थापना से जुड़े गैर-सरकारी संगठन, प्रसिद्ध व्यक्तित्व यथा लेखक, मॉडल, तारिकाएं, समाज सेवी धर्मगुरु, डायटीशियन, चिकित्सक आदि हस्तियों को समय-समय पर महाविद्यालयों में आमंत्रित कर उनके व्याख्यान, खुली चर्चा, प्रश्नोत्तरी, समस्या समाधान आदि कार्यक्रमों का आयोजन करना। परिणामस्वरूप किशोर वय प्रशिक्षणार्थी 'नायक-पूजा' के माध्यम से सांस्कृतिक तत्वों से जुड़ सकें।

4. स्थानीय सांस्कृतिक केन्द्रों का भ्रमणः महाविद्यालय की ओर से स्थानीय या क्षेत्रीय परिवेश में सांस्कृतिक महत्व के कला, साहित्य, धर्म एवं ऐतिहासिक तथ्यों से जुड़े स्मारकों, इमारतों, संग्रहालय, ग्राम्य केन्द्रों, शिल्प केन्द्रों की यात्रा का त्रैमासिक अंतराल पर आयोजन हो जिससे प्रशिक्षणार्थी उन साक्ष्यों से प्राप्त अनुभवों को लाभ

स्वयं भी उठाये तथा विद्यार्थियों को भी प्रेरित कर सके।

5. पाठ्यसामग्री क्रियाओं का आयोजन: दैनिक कक्षाओं के आयोजन के साथ-साथ समय सारिणी में प्राथमिकता से ऐसे संस्कृति प्रधान कार्यक्रमों यथा संगीत, नृत्य, मंत्रोच्चारण, गायन, परंपरागत वेशभूषा, भक्ति काव्य, अंत्याक्षरी आदि की आयोजना हो साथ ही परंपरागत स्वास्थ्यवर्धक खेल विधाओं, मल्लखंभ, तैराकी, घुड़सवारी,रक्षा युक्तियों आदि मनोरंजक कार्यक्रमों व प्रतिस्पर्द्धा का आयोजन भी सांस्कृतिक विकास में सहायक है।

6. सांस्कृतिक स्वरोजगार का प्रशिक्षण: विविध सांस्कृतिक विधाओं को प्रशिक्षणार्थियों के स्वरोजगार से जोड़कर उन्हें प्रेरित करना जिससे वे हृदय से एकाग्रचित होकर प्राचीन कला व संस्कृति से जुड़े हस्तशिल्प, कसीदाकारी, पेपरमेशी, बर्तन, रंगकारी, स्थानीय विशिष्ट कलाएँ आदि का प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें।

7. शिक्षण विधियों की व्यूह रचना: प्राध्यापक गण अपने विषय की कक्षाओं के दौरान शिक्षण विधियों की योजना इस प्रकार बनायें कि इसके अन्तर्गत उदाहरण, प्रसंग, कथानक, प्रायोजना कार्य, सत्रीय कार्य आदि के माध्यम से प्रशिक्षणार्थी भारतीय संस्कृति के विविधतापूर्ण आयामों का परिचय प्राप्त करते हुये अपने जीवन मूल्यों के साथ इनको जोड़ सके।

8. सामाजिक सरोकार के कार्यक्रम: प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षणार्थियों को सांस्कृतिक परिवेश से रूबरू होने के लिए नुक्कड नाटक, टॉक-शो, जागरूकता अभियान, विशिष्ट पर्व, मेले आदि में सहभागिता के साथ-साथ सरकारी व गैरसरकारी संगठनों द्वारा संचालित कार्यक्रमों में सक्रिय भूमिका प्रदान की जाये।

इसके अतिरिक्त दैनिक प्रार्थना सभा में ध्यान, योग, आसन, प्राणायाम, राष्ट्रभक्ति गीत, मंत्रोच्चार आदि को शामिल करना, सांस्कृतिक केन्द्र की महाविद्यालय स्तर पर स्थापना, संस्कृति प्रधान लेखन, शोध कार्य, प्रोजेक्ट आदि के माध्यम से प्रशिक्षणार्थियों का सांस्कृतिक विकास संभव है। सारांशतः अध्यापक शिक्षा से जुड़े सभी शिक्षाविदों, प्रबन्धकों, प्राध्यापकों, सरकारी व गैर सरकारी निकायों की यह नैतिक जिम्मेदारी है कि वे पश्चिमीकरण के सकारात्मक तत्वों का सम्मिश्रण करते हुए भारतीय संस्कृति के मूल स्वरूप को प्रतिस्थापित करते हुए समन्वयवादी दृष्टिकोण अपनाये; जिससे हमारे भविष्योन्मुखी प्रशिक्षक आगामी शिक्षक जीवन में भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण उपलब्धियों, विलक्षणताओं एवं वैज्ञानिकता को एक विद्यार्थी तक परिष्कृत रूप में पहुँचा सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- पण्ड्या, गौरीशंकर (1893)-भारतीय संस्कृति का विश्वव्यापी प्रभाव, किताबघर, गाँधीनगर, दिल्ली
- कामायनी कामिनी (2001)-भारतीय जीवन मूल्य, ज्ञान गंगा, नई दिल्ली
- पाठक वीणा व्यास (2002)-शिक्षा के विविध आयाम, कला प्रकाशन, वाराणसी
- शर्मा नंदकिशोर (1992)-भारतीय दार्शनिक समस्याएँ, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
- दिनकर रामधारीसिंह (1998) संस्कृति के चार अध्याय, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद
- दुबे श्यामाचरण (1996)-समय और संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
- सिंह सुखवीर-भारतीय संस्कृति के मूल तत्व, साहित्य भण्डार, मेरठ

उत्साह बलवान होता हैं। उत्साह से बढ़कर कोई दूसरा बल नहीं है। उत्साही व्यक्ति के लिए कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है। **-इमर्सन**